योजना

वर्ष 58 ● अंक 1 ● जनवरी 2014 ● माघ–पौष, शक संवत 1935 ● कुल पृष्ठ 56

प्रधान संपादक
राजेश कुमार झा

वरिष्ठ संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय
538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली–110 001
दूरभाष : 23717910, 23096738
टेलीफैक्स : 23359578
ई–मेल : yojanahindi@gmail.com
वेबसाइड : www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
वी. के. मीणा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26100207
फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण : **जी. पी. धोपे**

इस अंक में

संपादकीय	–	5
संवैधानिक प्रावधान कानून और जनजातियां	वर्जीनियस खाखा	7
नयी रोशनी की तलाश में घुमंतू जनजातियां	अरविंद कुमार सिंह	11
आदिवासियों के लिये स्वशासन	राहुल बनर्जी	17
खाद्य विधेयक, वन्य आहार और आदिवासी	मधु रामनाथ	21
शोध यात्राः ऐसा यात्री बैग जिस पर आप बैठ भी सकते हैं	–	23
जलवायु परिवर्तन और प्रशासनिक तैयारी	सुभाष शर्मा	25
आदिवासी साहित्य और समाज	गंगा सहाय मीणा	29
भूमि संयोजक– ग्रामीण भूमि प्रशासन में परिवर्तन का अग्रदूत	संजॉय पटनायक	33
विकास की अवधारणा और जनजातियों का स्वास्थ्य	नूतन मौर्या	37
नवउदारवाद के दौर में जनजातियां	रहीस सिंह	41
बुनियादी सुविधाएं और आदिम समाज	ज्योत्सना राय	44
परिवर्तन के लिए सांस्कृतिक क्रांति का प्रभाव आवश्यक	अनिल चमड़िया	47
झारखण्ड की जनजातियां	मधुकर	49
पूर्वोत्तर में जनजाति एवं वंचित वर्ग	रजनीश मिश्र	51

योजना हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दु भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंको की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग'के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें। व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड IV, तल VII, आर. के. पुरम, नयी दिल्ली–66 दुरभाष : 26100207, 26105590 तार : सूचनाप्रकाशन।

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं : सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली–110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं, 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली–110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी– विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई–400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड, ईस्ट, कोलकाता–700069 (दूरभाष : 22488030), * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई–600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुअनंतपुरम–695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं–4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद–500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु–560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना–800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं–1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर–एच, अलीगंज, लखनऊ–226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोरख अहमदाबाद–380007 (दूरभाष : 26588669) के. के. बी. रोड, नयी कॉलोनी, कमान संख्या–7, चेनीकुटी, गुवाहाटी–781003 (दूरभाष : 2665090)

चंदे की दरें : वार्षिकः ₹100 द्विवार्षिक : ₹180, त्रैवार्षिक : ₹ 250, विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश : ₹ 530, यूरोपीय एवं अन्य देश : ₹ 730। योजना में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने है। जरूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए योजना उत्तरदायी नहीं हैं।

विकास की अवधारणा और जनजातियों का स्वास्थ्य

• नूतन मौर्या

विश्व बैंक के मुताबिक बेहतर सेहत केवल बीमारी और कुपोषण से मुक्ति का नाम नहीं है। इसमें शारीरिक, मानसिक और सामाजिक उन्नति भी शामिल है। यही वजह है कि मानव विकास की अवधारणा में इन सभी तत्वों को शामिल किया गया। भारतीय संदर्भ में जनजाति समाज के सेहत की विवेचना को भी हमें विकास की अवधारणा से जोड़कर देखना होगा। मुख्यधारा के आर्थिक विकास का संबंध प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से जुड़ा है। ज्यादातर खनिज संसाधनों के केंद्र में जंगल है जो सदियों से जनजाति समाज का पर्यावास रहा है। इसलिए खनिज संसाधनों की जरूरत ने पर्यावास की पुरातन व्यवस्था को बदलना शुरू किया है। इसलिए मौजूदा विकास के दौर में जनजाति समाज का जीवनचक्र बड़े संक्रमण से गुज़र रहा है। जनसंख्या और सामाजिक संरचना के साथ शिक्षा, गरीबी और सेहत के सूचकांक से साफ है कि अनुसूचित जनजाति के लिए बेहतर स्वास्थ्य बनाए रखना बड़ी चुनौती है। इन समुदायों में संक्रामक और गैरसंक्रामक दोनों तरह की बीमारियां पाई जाती हैं। संक्रामक बीमारियों में तपेदिक (टीबी), मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया, लिंफेटिक फिलारेसिस और डायरिया का प्रकोप ज्यादा है। जनजाति समाज में मौजूद गैर संक्रामक बीमारियो में खासतौर पर कैंसर, हाइपरटेंशन, पीढ़ियों से मौजूद जेनेटिक डिसऑर्डर और कुपोषण जनित बीमारियां मौजूद हैं। बाल और शिशु मुत्युदर, रक्ताल्पता (एनीमिया) अभी भी जनजाति समाज के लिए बड़ा अभिशाप साबित हो रहा है।

अनुसूचित जनजातियों के स्वास्थ्य के ऊपर शोध और अध्ययन बहुत सीमित हैं। फिलहाल भारतीय चिकित्सा एवं शोध परिषद (आईसीएमआर) ने अलग से अनुसूचित जातियों के स्वास्थ्य पर पूरे देश में ट्राइबल हेल्थ रिसर्च फोरम ;(टीएचआरएफ) की नींव डाली है। इसके अलावा राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य सर्वे–3 के अध्ययन से जनजाति समुदाय के स्वास्थ्य से जुड़े तथ्यों की जानकारी मिलती है। मानवशास्त्रियों और गैर सरकारी संगठनों ने भी विस्तार से जनजाति समूहों के स्वास्थ्य और संस्कृति से जुड़े मुद्दों पर अध्ययन किया है लेकिन यह टुकड़ों में और अलग–अलग कालखंडों में किया गया है। तमाम सीमाओं के बावजूद इन अध्ययनों से अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य की हालत को समझने के लिए भरपूर तथ्य और विश्लेषण मिलते हैं।

अनुसूचित जनजाति की संख्या और सामाजिक संरचना

स्वास्थ्य के जिस विस्तारवादी नजरिये से हम अनुसूचित जनजाति का जायजा ले रहे हैं उसके लिए जरूरी है कि पहले जनसंख्या विभाजन और सामाजिक तंत्र पर संक्षिप्त नज़र डाली जाए। जनजाति आबादी के मामले में अफ्रीका के बाद भारत दूसरा सबसे बड़ा देश है। देश की कुल आबादी में जनजाति आबादी का हिस्सा 8.2 फीसदी है (जनसंख्या आयोग 2011)। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के मुताबिक देश में करीब 697 जनजाति समूह निवास करते हैं। जिसमें 75 ऐसी जनजातियां है जिन्हें आदिम जनजाति समूह (प्रीमिटिव ट्राइबल ग्रुप–पीजीटी) कहा गया है। आदिम समूह का दर्जा अबूझमडिया, बोड़ो, बोंदो, बिरहोर, बैगा, कमार, सहरिया और ओंग जनजातियों को मिला है। भील, संथाल, और गौंड जैसी अनुसूचित जनजातियों की संख्या औरों से ज्यादा है। इनका पर्यावास मध्य और पश्चिम भारत में हैं। अकेले छत्तीसगढ़ में 32 फीसदी जनजातिय आबादी बसती है। जबकि संथाल जनजाति की आबादी बिहार, झारखंड, ओड़ीसा और पश्चिम बंगाल में हैं। हालांकि जनसंख्या के लिहाज से आबादी का ज्यादा हिस्सा पूर्वोत्तर राज्यो में केंद्रित हैं, अकेले मिजोरम में 94 फीसदी अनुसूचित जनजातियों की आबादी है। उत्तर–पूर्व की जनजातियों में खासतौर पर मीजों, गारो, नगा, खासी, चकमा जैसी जनजातियां मौजूद हैं। सबसे कम जनजातियां दक्षिण भारत में रहती है। दक्षिण भारत में बसने वाली जनजातियों में चेंचू, डबला, गडाबास, ओंध, टोडा और कोलम शामिल हैं। अंडमान और निकोबार की आबादी का 8 फीसदी हिस्सा अनुसूचित जनजाति में आता है। यहां जरवा और ओंग जैसी जनजातियां पाई जाती है।

किसी समाज के स्वास्थ्य और सामाजिक संरचना का सबसे बड़ा पैमाना स्त्री–पुरुष अनुपात होता है। इस मामले में अनुसूचित जनजाति बाकी समाज के मुकाबले ज्यादा प्रगतिशील हैं। जनसंख्या (2011) के नये आंकड़ें बताते हैं कि देश में एक हज़ार पुरुषों पर 940 महिलाएं हैं जबकि अनुसूचित जनजाति में यह अनुपात 990 है। पुराने जनसंख्या के आंकड़ें भी बताते हैं कि लिंगानुपात में अनुसूचित जनजाति का रिकार्ड तुलनात्मक रूप से बेहतर रहा है। (देखें तालिकाः 1)। इसकी सबसे बड़ी वजह है कि सांस्कृतिक और सामाजिक मान्यताओं में अनुसूचित जाति के भीतर पुरुषों के मुकाबले महिलाओं को बराबरी भले न कहा जाय लेकिन बाकी समाज के मुकाबले ज्यादा अधिकार है। हालांकि इन समुदायों के भीतर लिंगानुपात एक समान नहीं हैं। सिक्किम के शेरपा समुदाय में जहां 1000 पुरुष पर 744 महिलाएं हैं। वहीं उड़ीसा के दूध खडियासा जनजाति में लिंगानुपात 1098 हैं।

स्वास्थ्य से जुड़े खास सूचकांक

विभिन्न अध्ययनों द्वारा यह पाया गया कि राष्ट्रीय औसत की तुलना में जनजातीय समुदायों में उच्च शिशु मृत्युदर, पोषण का निम्नस्तर, निम्न जीवन–प्रत्याशा जैसे सूचकांक

तालिका : 1
जनजाति समाज में लिंगानुपात

वर्ष	अनुसूचित जनजाति	राष्ट्रीय
2011	990	940
2001	978	933
1991	972	927
1981	983	935
1971	982	930

स्रोत–जनसंख्या विभाग

बेहतर नहीं है। इसके अलावा ग्लूकोज–6 फास्फेट एन्जाइम की कमी और सिकिल–सेल जैसी बीमारी के मामले भी ज्यादा पाए जाने लगे हैं। आर्थिक रूप से कमजोर होने का असर जनजातीय समुदाय की स्त्रियों में उच्च प्रजनन दर और इससे पैदा होने वाली स्वास्थ्य सुविधाएं आम होती जा रही हैं। (बासु, साथी, 1990; चौधरी, 1990)

जनजातीय समुदायों में गरीबी और कुपोषण का असर परिवार के लड़के और लड़की पर समान रूप से पड़ा है। दोनों मामलों में शिशु मृत्युदर तुलनात्मक रूप से अधिक है। शिशु मृत्युदर (आईएमआर) का अर्थ है कि एक हज़ार जन्म लेने वाले बच्चों में कितने बच्चों की मृत्यु होती है। औसतन देश में आईएमआर घटा है। 1991–95 में आईएमआर 77 प्रति हज़ार था जो 2001–05 में घटकर 55 प्रति हज़ार हो गई। राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य सर्वे के अलावा 2011 के जनसंख्या के आंकड़े भी बताते हैं कि शिशु मृत्युदर पर बहुत हद तक काबू पाया गया है। अनुसूचित जाति में जन्म के एक साल के भीतर पैदा होने वाले बच्चों की प्रति हज़ार मृत्यु तो ज्यादा नहीं है लेकिन एक साल और चार साल की उम्र के बीच होने वाली बाल मृत्युदर ज्यादा है। इसके अलावा पांच साल के उम्र के भीतर की मृत्युदर भी बाकी समाज से कहीं अधिक है (देखें तालिका 2)। मृत्युदर में संतोषजनक सुधार न होने के पीछे बड़ी वजह बच्चों में जरूरी टीकाकरण का अभाव है। एनएफएचएस 3 के आंकड़े बताते हैं कि अनुसूचित जनजाति के भीतर केवल 31 फीसदी बच्चों को जरूरी टीकाकरण होता है। जबकि अनुसूचित जाति में टीकाकरण वाले बच्चों का 39.7 फीसदी है। पिछड़े और बाकी वर्गो का प्रदर्शन कहीं बेहतर है।

जनजाति समुदाय के भीतर दूसरी बड़ी चुनौती कुपोषण और रक्ताल्पता है। कुपोषण की वजह से पुरुष या स्त्री में बीमारियों से लड़ने की ताक़त खत्म हो जाती है और वह संक्रमण रोगों की चपेट में जल्दी आतें है। यह बीमारियों की एक चक्र पैदा करता है। भारत की जनजाति आबादी में खून की कमी भी तेज़ी से बढ़ा है। एनएफएचएस 3 के मुताबिक 6–59 महीने के 47.3 फीसदी अनुसूचित जनजाति के बच्चों के भीतर मध्यम किस्म की रक्ताल्पता पाई गई। जबकि अनुसूचित जाति और पिछड़े वर्ग में तुलनात्मक रूप से कम है। हालांकि रक्ताल्पता की शिकायत ज्यादातर भारतीय बच्चों में पाया गया है लेकिन जनजाति आबादी में रक्ताल्पता ज्यादा पाई जा रही है। ओड़िसा की आदिम जनजाति पौड़ी भुईया के भीतर 85 फीसदी रक्ताल्पता पाई गई है। मध्य प्रदेश छत्तीसगढ़ के अबुझमरिया जनजाति में 40 फीसदी, बिरहोर में 29 और बैगा में 42.2 फीसदी आबादी रक्ताल्पता का शिकार हैं।

प्रजनन दर

जनजाति समुदाय के लिए स्वास्थ्य के सूचकांकों पर नजर डालें तो प्रजनन की अधिाक दर (टीएफआर) अभी भी एक चुनौती है। कुल प्रजनन दर यानी टीएफआर में एक महिला द्वारा पैदा किए गए औसत बच्चों की संख्या को लिया जाता है। वर्तमान में देश की कुल प्रजनन दर (टीएफआर) 2.3 है। सरकार इसे दो पर लाने की कोशिश कर रही है। लेकिन जनजाति समाज में टीएफआर 3.12 है।

आदिवासी जनजाति समुदाय में बच्चा जनने के दौरान होनेवाली औसत मृत्युदर बाकी समजों से कहीं ज्यादा है। इसकी सबसे बड़ी वजह है महिलाओं में खून की कमी, पोषक भोजन का अभाव, स्वास्थ्य केंद्र या अस्पताल की जगह घरों में बच्चे का जन्म और कम उम्र में मां बनना है। 21 फीसदी जनजाति महिलाएं कम उम्र (15–19 साल) में मां बनती हैं जबकि अनुसूचित जाति में 20 फीसदी और अन्य पिछड़े वर्ग में 16 है जबकि अन्य वर्ग 15–19 साल की उम्र में मातृत्व धारण करनेवाली महिलाओं का हिस्सा 12 फीसदी है (एनएफएचएस–3)।

किसी भी समाज में लड़की का विवाह किस उम्र में किया जाय यह उसक सामाजिक मूल्यों से निर्धारित होता है। समान्य रूप से आदिवासियों में बाल विवाह का प्रचलन नहीं होता है। आदिवासी समाजों में लड़कियों की शादी सामान्यतः किशोरावस्था के बाद ही की जाती थी। किसी जनजाति में विवाह के समय स्त्रियों की उम्र पर बहुत कम अध्ययन उपलब्ध है। पूर्वोत्तर क्षेत्र के आदिवासी समुदायों में लड़कियों की उम्र शादी के समय अपेक्षाकृत रूप से अधिक है जबकि देश के केंद्रीय भाग में निवास करने वाले आदिवासी समुदायों में यह कम है, ऐसा हिन्दु सांस्कृतिक प्रभाव के कारण है। जैसे आओ नागा (16–20 वर्ष), चैन्चु में किशोरावस्था के बाद, खासी (13–18 वर्ष), कोली (12–16 वर्ष), बोद (19 वर्ष), गोंड एवं मुंडा (18 वर्ष), ओरांव (16 वर्ष) है (सिन्हा 1986)। सिक्किम के भोटिया और लद्दाख के बोद आदिवासी समुदाय बालविवाह से अनभिज्ञ है (भसीन, 1998, 1990)।

शिक्षा का अभाव

स्वास्थ्य को लेकर सजगता की सबसे बड़ी वजह अशिक्षा है। गांधी जी कहते हैं कि अगर एक पुरुष को शिक्षा मिलती है तो वह एक व्यक्ति साक्षर होता है जबकि एक महिला को शिक्षा मिलती है तो सभ्यता साक्षर होती है। महिलाओं में अशिक्षा या स्कूल से वंचित रहने की सबसे बड़ी वजह ग़रीबी है। राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य सर्वे के आंकड़े बताते हैं कि बेहतर आय वाले परिवारों की महिलाओं और सबसे कम आय वाले परिवार की महिलाओं के स्कूल से वंचित रहने का फासला बड़ा है। तुलनात्मक रूप से जनजाति महिलाओं की शिक्षा के बारे में प्रदर्शन बहुत ख़राब है। 62 फीसदी जनजाति महिलाओं ने स्कूल का मूंह तक नहीं देखा है। जबकि स्कूल तक नहीं पहुंच पानेवाली अनुसूचित जाति की महिलाओं का हिस्सा 51 फीसदी है (देखें तालिका 3)

जनजाति समाज में शिक्षा की कमी से नई जानकारियों को आत्मसात नहीं कर पाता। जिन माध्यमों के जरिए जनजाति आबादी तक संदेश जाना चाहिए वहां तक समाज के

तालिका : 2
अनुसूचित जनजाति में शिशु और बाल मृत्युदर

	शिशु मृत्युदर	बाल मृत्युदर	5 साल भीतर मृत्युदर
अनुसूचित जनजाति	62.1	35.8	95.7
अनुसूचित जाति	66.4	23.2	88.1
अति पिछड़ा वर्ग	56.6	17.3	72.8
अन्य	48.9	10.8	59.2

स्रोत–एनएचएफएस–3

हासिए वाले समुदाय की सीमित पहुंच है। 37.8 फीसदी जनजाति आबादी सूचना के माध्यम तक स्थाई पहुंच नहीं है। महिला और पुरुष के बीच जनसंचार माध्यमों तक पहुंच के बीच भी काफी फर्क है। 57 फीसदी जनजाति महिलाएं हैं जो किसी भी किस्म का जनसंचार माध्यम के संपर्क में नहीं आती हैं। जबकि 38 फीसदी पुरुष भी सूचना तंत्र से दूर हैं। इसका सीधा असर सरकार या निजी क्षेत्र के जरिए चलाए जाने वाले स्वास्थ्य कार्यक्रमों के प्रभाव पर पड़ता है। जानकारी के अभाव में जनजाति समुदाय बीमारियों से लड़ने और बचाव के आधुनिक तौर तरीकों से वंचित हो जाता है।

जो सांस्कृतिक प्रतिमान विशेष रुप से स्त्रियों के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं वे हैं – शादी, शादी क तरीके (एक – विवाह या बहु–विवाह), शादी की उम्र, प्रजनन और बच्चे के लिंग से संबंधित सामाजिक – सांस्कृतिक मूल्य, समाज में उस स्त्री की परिस्थिति, निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं के आधार पर स्त्री से आदर्श भूमिका निभाने और र्का करने की अपेक्षा करना (क्षत्रिय, 1992)।

किसी सरकार के लिए सबसे जरूरी होता है कि उसके पास समुचित आंकड़े हों। जिससे अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य के मौजूदा हालात और योजनाओं की सही तरीक़े से लागू किया जा सके। इसमें सबसे आधारभूत जरूरत है जन्म का पंजीकरण और प्रमाण पत्र देना। पंजीकरण और जन्म प्रमाण पत्र के राष्ट्रीय औसत पर नज़र डालें तो देश के पांच साल से कम आयु के 41 फीसदी बच्चों के जन्म का पंजीकरण हुआ हैं। जिसमें 27 फीसदी बच्चों के पास जन्म प्रमाण पत्र है। कमजोर आय वाले परिवारों में केवल एक चौथाई बच्चों का पंजीकरण हुआ है जबकि हर दस में से केवल एक बच्चे के पास जन्म प्रमाण पत्र है। जनजातीय परिवारों के 39 फीसदी बच्चे पंजीकृत है जबकि 21.6 के पास जन्म प्रमाण पत्र है। इसमें सबसे खास योगदान मिज़ोरम कुल पंजीकरण (93.3) जैसे राज्यों में पंजीकरण का बेहतर रिकार्ड होना है। सिक्किम (85.4) और त्रिपुरा (74.4) जैसे राज्यों का प्रदर्शन तो दिल्ली (62.4) और हरियाणा (71. 7) से बेहतर है।

खराब स्वास्थ्य के लिए गरीबी और आधारभूत सुविधाएं जिम्मेदार

आर्थिक और सामाजिक जनसाख्यकीय हैसियत को देखें तो आदिवासी समूहों के भीतर बड़े पैमाने पर निर्धनता है। योजना आयोग के मुताबिक करीब जनजाति समूहों की आधी आबादी गरीबी रेखा से नीचे गुजर–बसर करती है। केवल 7–10 फीसदी जनजाति आबादी ऐसी है जिसकी महीने की आमदनी दस हजार रुपए है। तुलनात्मक रूप से अनुसूचित जनजाति समुदाय को आधारभूत सुविधाओं जैसे आवास, भोजन, ईंधन के लिए रोजाना जदोजहद करनी पड़ती है। आंकड़े बताते है कि केवल 40.6 फीसदी अनुसूचित जनजाति के पास सिर पर छप्पर यानी निवास है। जबकि बाकी समुदाय के 53.1 फीसदी लोगों के पास यह सुविधा है। यही नहीं 77 फीसदी अनुसूचित जनजाति के रिहायसों के पास शौचालय नहीं है। इसी तरह 87 फीसदी अनुसूचित जनजाति के लोग खाना बनाने के लिए धुआं पैदा करने वाले ईंधन इस्तेमाल करते हैं।

पर्यावास में बदलाव और विकास का असर

जनजाति समाज का बड़ा आर्थिक आधार जंगल से जुड़ा है। तेज़ आर्थिक विकास की दौड़ में वनों पर दबाव बढ़ा है। 1952 में सरकार ने पहली बार औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुए वन नीति जारी किया। जिसमें वन के एक हिस्से को व्यावसायिक तौर पर कच्चे माल के रूप में इस्तेमाल की बात मानी गई। यहीं से जनजाति समाज का आधुनिक समाज के आर्थिक हितों के बीच संघर्ष शुरू हुआ। दोबारा 1988 में भारत सरकार नई वन नीति लेकर आई। जिसमें आदिवासियों को समस्या की जगह समाधान के रूप में देखा गया। बावजूद इसके वनों जंगल पर आधारित आदिवासियों की जीवन से जुड़ा पर्यावास और रोजी–रोटी नज़रअंदाज होने लगी। सरकार की विकास परियोजनाएं, सरकारी और निजी औद्योगिक इकाइयों की स्थापना, खनन, हाइड्रोइलेक्ट्रिक तथा सड़क और परिवहन की परियोजनाओं के चलते उन्हें अपने जंगल और ज़मीन से अलग होना पड़ा। यहीं से जनजाति समाज का शहरों की ओर पलायन शुरू हुआ। पारंपरिक दवाओं के अभाव और आधुनिक इलाज के तरीक़ों को आत्मसात न कर पाने से जनजाति समाज के स्वास्थ्य की हालत पर खराब असर पड़ा है।

जनजाति समाज के लिए सरकारी प्रयास और योजनाएं

अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य का सीधा संबंध उनके आर्थिक सशक्तीकरण पर टिका है। सरकार ने इस बारे में आज़ादी के बाद से चनणबद्ध तरीक़े से कई कार्यक्रम चलाया। तकरीबन सभी योजनाओं में अनुसूचित जाति के विकास को एक प्रमुख उद्देश्य के रूप में चिह्नित किया गया। हालांकि अनुसूचित जनजाति में आर्थिक सशक्तीकरण सांसकृतिक रूकावटों और परंपराओं से लड़ते हुए हासिल करना था इसलिए इसमें देरी स्वाभाविक थी। धीमी प्रगति और नये रहन–सहन के हालात में बदलाव से जनजाति समूहों के लिए मानसिक और शारीरिक बीमारियां तेजी से फैलने लगी। जिसके बाद सरकार ने 1983 में घोषित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के भीतर तत्काल प्रभाव से अनुसूचित जनजातियों के लिए खासतौर पर नीतिगत घोषणाएं की। जिसमें महामारियों से निपटने के लिए खास रणनीति और इंतजाम की बात कहीं गई। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने 1981 में अलग से जनजाति विकास योजना सेल बनाया। जिसमें इस समाज के लिए घोषित योजनाओं की देखरेख और सही तरीके से लागू कराने की गारंटी दी जा सके। जनजाति समूह सुदूर पहाड़ों, जंगलों और गावों में बसते हैं इसलिये मंत्रालय ने उप–स्वास्थ्य केंद्र खोलने वाले नियमों में खासतौर पर ढ़ील दी। पहाड़ी क्षेत्रों में उपकेंद्र स्थापित करने के लिए कम से कम 3 हजार की आबादी की शर्त कर दी गई। यह शर्त मौदानी इलाक़ों के लिए 5 हजार थी। ठीक इसी तर्ज़ पर प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (पीएचसी)

तालिका : 3
जनजाति समाज में साक्षरता

वर्ष	अनुसूचित जनजाति	अन्य वर्ग
कुल	63.1 प्रतिशत	72.8 प्रतिशत
महिला	54.4 प्रतिशत	64.0 प्रतिशत
पुरुष	71.7 प्रतिशत	81.1 प्रतिशत

स्रोत–एनएचएफएस–3(2005–06)

के लिए आबादी की शर्त 20 हज़ार की गई जबकि मैदानी इलाक़ों में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के लिए कम से कम 30 हज़ार की आबादी ज़रूरी थी। पहाड़ी और जनजाति इलाकों के लिए सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (सीएचसी) खोलने की सीमा को 80 हज़ार किया गया। इस मामले में भी मैदानी इलाकों के लिए शर्त एक लाख बीस हजार आबादी की थी। इसी तरह जनजाति बहुल इलाक़ों में बहुउद्देशीय कायकर्ता रखने की शर्त भी तीन हजार की गई जो मैदानी इलाकों में 5 हजार थी। न्यनतम जरूरी कार्यक्रम के तहत जनजाति इलाक़ों में 1999 तक 20, 769 उपकेंद्र 3286 प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और 541 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र खोले गए।

इसके अलावा केंद्रीय योजना समीति ने स्वास्थ्य सुविधाओं को पहुंचाने के लिए सुदूर जनजातीय इलाक़ों की पहचान की जिसमें 13 राज्यों के 52 जिले शामिल थे। राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के साथ जापानी बुखार, कालाजर, फाइलेरिया जैसी बीमारियों को रोकने के लिए विशेष प्रयास किए गए। इसमें केद्र की ओर से राज्यों को कुल ख़र्च का 50 फीसदी भुगतान करने का फैसला किया गया। मलेरिया नियंत्रण के लिए विश्व बैंक की सहायता से 100 जनजाति जिलों की पहचान की गई जिसमें मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र और ओड़िसा जैसे जिले शामिल थे।

केंद्र सरकार ने जनजातीय इलाकों में कुष्ठ निवारण के लिए कार्यक्रम की शुरुआत की। इस योजना के दायरे में देश का पूरा जनजातीय क्षेत्र शामिल था।

जनजाति समूहों को सबसे ज्यादा उम्मीद 2005 में शुरू की गई राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य योजना (एनआरएचएम) से है। जिसका खास उद्देश्य ग्रामिण इलाक़ों में बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराना है। इसके तहत गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाली महिलाओं के लिए जननि स्वास्थ्य योजना (जेएसवाई) काफी कारगर साबित हुई है। 19 साल से ऊपर की महिला अगर किसी अस्पताल में बच्चे को जन्म देती है तो उसे 700 रुपये देने का प्रावधान है। घर पर बच्चा पैदा होने की हालत में 400 रुपये दिया जाता है। हालांकि एनआएचएम के समाने जनजाति समाज के स्वास्थ्य को लेकर ठोस आंकड़ों का अभाव है। बावजूद इसके एनआरएचएम ने माना है कि स्वास्थ्य सेवाओं की फौरी जरूरत जनजाति समाज की महिलाओं को सबसे ज्यादा है।

सरकार ने स्वास्थ्य सुविधाओं के साथ कई आर्थिक योजनाएं भी शुरू की। 1951 से अनुसूचित जनजाति के लिए विशेष प्रयास शुरू हुए। इसके बाद 1956 में पंचशील सिद्धांत को अपनाया गया। जिसमें जनजाति समाज के विकास के लिए पांच दिशानिर्देशों को चिह्नित किया गया। जनजाति विकास को तेज करने के लिए 1961 में सरकार ने बहुउद्देशीय जनजाति विकास ब्लॉक खोल दिया। पांचवी पंचवर्षीय योजना में अलग से ट्राइबल सब प्लान (टीएसपी) की शुरुआत की। इसका उद्देश्य विकास की सीधे जनजाति समाज तक पहुंचाना था। केंद्र और राज्य जनसंख्या के आधार पर कोष मुहैया कराना शुरू किए। जिससे कल्याणकारी और विकास योजनाओं को कारगर तरीके से लागू किया जा सके। छठी योजना (1980–85) में जनजाति विकास के मद में पैसा बढ़ाया गया ताकि 50 फीसदी आबादी गरीबी रेखा से ऊपर उठ सके। जबकि सातवीं योजना (1985–90) में विकास के लिए आधारभूत संरचना पर जोर दिया गया। इस योजना में शिक्षा पर जोर डाला गया और अनुसूचित जनजाति के आर्थिक विकास के लिए दो महत्वपूर्ण संस्थानों की नींव डाली गई। 1987 में ट्राइबल कोऑपरेटिव मार्केटिंग डेवलपमेंट फेडरेशन (टीआरआईएफईडी) और 1989 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसएफडीसी) खोला गया। टीआरआईएफईडी जहां राज्य जनजाति विकास कोरपोरेशन की उच्च बॉडी बना वहीं एनएसएफडीसी का शुरुआती मकसद जंगल और कृषि उत्पाद का बेहतर मूल्य दीलाना था जो बाद में रोज़गारपरक कर्ज देने का काम भी करने लगा। आठवीं योजना (1992–97) में जनजाति समाज और बाकी वर्गों के बीच की खाई को भरने का संकल्प लिया गया। अनुसूचित जनजातियों के शोषण को रोकने के अलावा अधिकारी की गारंटी दिलाने पर भी जोर दिया गया। इसमें जमीन से बेदखली राकने, न्यूनजम मजदूरी, जरूरतमंद अल्प जंगली उत्पादों को इकट्ठा करने जैसे अधिकार शामिल थे। नौंवी योजना (1997–2002) खासतौर पर जनजाति मामलों के मंत्रालय ने कई नई योजनाएं शुरू की गई।

निष्कर्ष

भारत ही नहीं पूरी दुनिया में जनजाति आबादी चौतरफा दबाव में है। कई जगहों पर तो वे लुप्त होने के कागार पर पहुंच चुकी हैं। ऐतिहासिक साक्ष्य बताते हैं कि खसरे जैसी बीमारी से 1967–1975 के बीच ब्राज़ील के रोराइमा में बसने वाले यानोमामी समुदाय विलुप्त होने के कगार पर पहुंच गया है। उनके आसपास के बाकी समुदायों की आबादी में भी 70 फीसदी की गिरावट आ गई। अंडमान–निकोबार द्वीप के ओंग समुदाय का उदाहरण हमारे सामने हैं। जिनकी आबादी में भारी गिरावट देखी जा रही है।1900 में आंग की आबादी 670 थी जो 1961 में 169 पर आ गई। 1991 के उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक अब केवल 70 लोग ओंग समुदाय के बचे हैं। ओंग अंग्रेज शासन के समय से कई बीमारियों से लड़ते रहे। वे खासकर खसरा और इनफ्लुएंजा के शिकार बनते गए। आजादी के बाद भी ओंग समुदाय में 170 बच्चे पैदा हुए और उनमें से कोई भी दो साल उम्र पूरी नहीं कर सका। ऐसे में भारत सरकार ने उन्हें स्ट्रेट आईलैंड पर बसाने की योजना बनाई। जहां उन्हे सरका घर खाना और कपड़ा मुहैया करा रही है। बावजूद इसके वे बड़े स्तर पर तपेदिक के शिकार बन रहे हैं।

इसलिए यह साफ है कि अनुसूचित जनजाति के स्वास्थ्य के बेहतर बनाने की पहली शर्त यही है कि आर्थिक विकास से जोड़ने के लिए बेहद संवेदनशील रवैया अपनाना होगा। यह समझना होगा कि एक आबादी जहां रहने के लिए अभ्यस्त थीं तो वह केवल उनके लिए एक घर नहीं था। वे रोजी–रोटी के लिए किसी आयातित उत्पाद पर निर्भर नहीं होते हैं। बीमारियों का इलाज पारंपरिक और फूल–पौधों के जरिये करते हैं। जो अपनी जहां से बेदखल कर दिए जाते हैं। उन्हें मानसिक और शारीरिक झटके के साथ–साथ सांस्कृतिक बिखराव का समापना करना पड़ता है। इसलिए विकास के मॉडल में जनजाति समुदाय से जुड़े पहलुओं को शामिल करना बेहद जरूरी है। यह सभ्यता की दरकार है कि वे विकास में पीछे छूट चुकी अपनी आबादी को बचाए। ❑

(लेखिका सेंटर फॉर एनवॉयरमेंट एंड डेवलपमेंट, एटीआरईई, बेंगलुरु में पोस्ट डाक्टोरल फेलो हैं। ई–मेलः nutanmaurya@gmail.com**)**